झाँसी में स्वतन्त्रता संघर्ष [चर्चा pdf]

हिंदुस्तान का इतिहास समझने से पहले हमे लगभग 100 से ज्यादा किताबें पढ़नी पड़ेंगी क्योंकि दुनियां में हिंदुस्तान मात्र ऐसा देश है जहाँ का इतिहास हजारों वर्ष पुराना है, यदि हम दक्षिण भारत में चले जायेंगे तो वहां का अलग इतिहास देखने को मिलेगा और यदि उत्तर भारत की तरफ आयेंगे तो यहाँ का अलग इतिहास देखने को मिलेगा| वहीं दूसरी तरफ आंदोलनों की बात करें तो, इस देश ने आजदी के लिए जितनी कुर्बानियां दी है अगर उन पर इतिहास सही से लिखा जाता तो हजारों वर्ष लग जाते इसीलिए इतिहासकरों को जो भी समझ में आया उन्होंने लिख दिया,आज का लेख वर्तमान के उत्तर प्रदेश झाँसी में स्वतन्त्रता संघर्ष के आधारित है |

ज्यादातर विद्यार्थियों तथा पाठकों रानी लक्ष्मीबाई के बारे में जानते है उनको यहाँ के और क्रांतिकारियों के बारे में ज्यादा पता नहीं है इसलिए झाँसी का असहयोग आंदोलन, उसके बाद मास्टर रूद्र नरायण, भगवानदास माहौर, सदाशिवराय मलकापुर ,रधुनाथ विनायक राव तथा क्रांतिकारी पंडित परमानन्द के बारे में चर्चा करेंगे |

झाँसी और झाँसी की रानी की गाथा :-

1857 की क्रान्ति ने झाँसी एवं वहाँ की रानी लक्ष्मीबाई के नाम को राष्ट्रीय इतिहास की मुख्य धारा में ला दिया। रानी लक्ष्मीबाई ने जमकर अंग्रेज़ों से लोहा लिया। ब्रिटिश सरकार ने जब रानी की लोकप्रियता एवं बुन्देलखण्ड में क्रान्ति की तीव्रता को देखा तो उन्होंने अपने सबसे योग्य सेनानायक को इसी क्रान्ति का दमन करने हेतु भेजने का निश्चय किया।

1854-56 के क्रीमिया युद्ध में ब्रिग्रेडियर जनरल ह्यूरोज ने अत्यन्त बहादुरी का परिचय दिया था। इस बहादुरी के पुरस्कार स्वरूप उसे मेजर जनरल एवं के.सी.बी. के पदक से सम्मानित किया गया था। उसकी योग्यता एवं बहादुरी को देखते हुए उसे भारत भेजा गया। 17 दिसम्बर 1857 को इन्दौर आकर उसने मध्य भारत की सेना की कमान सम्भाली। महू में रुककर स्यूरोज ने बुन्देलखण्ड में क्रान्ति के दमन की तैयारियाँ पूर्ण की।

झाँसी पर इतिहासकरों के लेख :-

ब्रिटिश इतिहासकार जॉन स्मिथ ने अपनी पुस्तक द रिबेलियस रानी में ब्रिगेडियर जनरल का महू से झाँसी तक आने के अभियान मार्ग का मानचित्र दिया है। क्रान्तिकारियों के डर से सागर के किले में 370 अंग्रेज़ शरण लिए हुए थे। किले को चारों ओर से क्रान्तिकारियों ने घेर रखा था। इस सम्बन् में स्यूरोज ने लिखा है

मेरी सबसे बड़ी चिन्ता और व्यग्रता तो यही है कि सागर को विद्रोहियों के चंगुल से कैसे मुक्त किया जाए। इस किले में छोटी से बड़ी तक महिलाएं और बच्चे बन्द हैं। अभी तक किले पर जैसे-तैसे अंग्रेजों का कब्जा बना हुआ है|

स्यूरोज महू से सीहोर आया। 16 जनवरी 1858 को सीहोर से सागर की ओर प्रस्थान किया। अंग्रेज़ों की मित्र भोपाल की बेगम ने उसकी सहायतार्थ उसे अपने 600 सिपाही दिए। ह्यूरोज को रोकने के लिए राहतगढ़ में शाहगढ़ राजा वखतवली, बानपुर राजा मर्दनसिंह, मन्दसौर का शहजादा फिरोज़ शाह, गढ़ी अम्बापानी के नवाब बन्धु आदिल मोहम्मद खाँ एवं फाजिल मोहम्मद खाँ मोर्चा जमाए हुए थे। राहतगढ़ के महत्त्व को ह्यूरोज भी जानता था और उसने लिखा था कि

"सीहोर से एक सौ मील तथा सागर से 25 मील दक्षिण-पश्चिम स्थित राहतगढ़ की गढ़ी शक्ति का एक पारम्परिक स्थान है। यह सागर की पश्चिमी सीमा और बुन्देलखण्ड की कुंजी है|"

राहतगढ़ के सामरिक महत्त्व को भारतीय क्रान्तिकारी एवं ब्रिटिश अधिकारी सभी जानते थे। इसीलिए क्रान्तिकारियों ने यहाँ मोर्चाबन्दी की। मर्दनसिंह की सेना में ब्रजलाल बख्शी शामिल था। यह भेदिया था। यह लड़ई सरकार के दीवान नत्थे खाँ का आदमी था। नत्थे खाँ को रानी लक्ष्मीबाई ने परास्त कर दिया था। वह विश्वासघात द्वारा रानी लक्ष्मीबाई से अपनी हार का बदला लेना चाहता था इसीलिए वह इन्दौर जाकर स्यूरोज से मिल गया। क्रान्तिकारियों के बीच रहने वाले अपने भेदियों द्वारा भेद लेकर ब्यूरोज की मदद करता था। इसी की सहायता से ह्यूरोज राहतगढ़ पर विजय प्राप्त करता हुआ |

3 फरवरी 1858 को सागर आया और सागर के किले को क्रान्तिकारियों के चंगुल से आजाद कराया। इसके पश्चात् वह झाँसी पहुँचा और रानी लक्ष्मीबाई के साथ घमासान युद्ध किया। यहाँ भी एक गद्दार दूल्हाजू ने 3 अप्रैल 1858 को किले का ओरछा द्वार खोलकर अंग्रेजों को किले में प्रवेश करा दिया। इस प्रकार इस गद्दार के कारण रानी को हार का मुँह देखना पड़ा। वह झाँसी छोड़कर कालपी होते हुए ग्वालियर गई. जहाँ एक घमासान युद्ध के पश्चात् 17 जून 1858 को वह वीरगति को प्राप्त हुई।"

झाँसी पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। यहाँ कई दिनों तक लूटपाट जारी रही। माझा प्रवास के लेखक विष्णु भट्ट गोडशे उस समय झाँसी में ही थे। उसने झाँसी में की गई लूटपाट एवं आगजनी का भयावह आँखों देखा हाल अपनी कृति माझा प्रवास में प्रस्तुत किया है।

कांग्रेस का अधिवेशन :-

झाँसी की रानी वीरगति को भले ही प्राप्त हुई, मगर उसने झाँसी वासियों में राष्ट्रवाद की भावनाएं कूट-कूटकर भर दी। 1885 में जब बम्बई में भारतीय राष्ट्रीय कॉंग्रेस की स्थापना हुई, तब झाँसी में भी उत्साह की लहर व्याप्त हुई। 1890 के कॉंग्रेस के इलाहाबाद अधिवेशन में झाँसी के एस. घोष ने भाग लिया। बार एसोशियेशन के अध्यक्ष राय साहब, शंकर सहाय एवं प्रागदास ने कॉंग्रेस अधिवेशनों में झाँसी का प्रतिनिधित्व किया। 1916 ई. में झाँसी किले के मैदान में श्री सी.वाई. चिन्तामणि की अध्यक्षता में पहला प्रादेशिक राजनीतिक सम्मेलन आयोजित किया। इसमें देश के लिए उत्तरदायी सरकार की स्थापना की गई। 1916 ई. में ही जिला कॉंग्रेस कमेटी ने झाँसी में होमरूल लीग की स्थापना की। उसी दौरान होमरूल लीग के संस्थापक श्री बालगंगाधर तिलक का झाँसी आगमन हुआ।